International Journal of Education and Science Research Review
IJESRR
Volume-9, Issue-4 July-August-2022
E-ISSN 2348-6457
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

"यजुर्वेद में प्रजापति देव : एक पर्यालोचन"

अर्चना भार्गव
सह–आचार्य, संस्कृत विभाग,
स.पृ.चौ.राज. महाविद्यालय,
अजमेर

मानव जीवन के विकास के तीन सोपान हैं – ज्ञान, कर्म तथा उपासना। यजुर्वेद मुख्यरूपेण कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करता है। इस वेद में ऐसे गद्यात्मक मन्त्र–समूह हैं जिनका विषय यज्ञ–विधियों को सम्पन्न करता है, चूँकि शतपथ–ब्राह्मण यजुर्वेद से सम्बद्ध है और इसमें प्रजापति की सर्वोच्च देव के रूप में स्तुति करते हुए शतपथ–ब्राह्मण को "प्राजापत्य–शास्त्र" की संज्ञा दी गयी है। अतः पूर्व स्रोतस्विता के रूप में यजुर्वेद में प्रजापति के स्वरूप को समझना आवश्यक है। यजुर्वेद के विभिन्न मंत्रों में लगभग 51 बार प्रजापति पद का उल्लेख हुआ है। यजुर्वेद के इन मन्त्रों से प्रजापति से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का ज्ञान होता है। प्रजापति को प्रथम शरीरी कहा गया है[1] अर्थात् विग्रह की शुरूआत यहीं से होती है। प्रजापति बह्माण्ड के हृदय के मध्य स्थित रहता हुआ सृष्टि के गर्भ में प्रवेश करता है और वहाँ से नित्य रूप होकर माया से संयुक्त होकर कार्य–सृष्टि के रूप में अनेक रूपों में उत्पन्न हो जाता है। ब्रह्मविद् ही उस प्रजापति के उत्पत्ति स्थल के स्वरूप को पहचानते हैं :–

"प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीराः तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा।।"[2]

23वें काण्ड में प्रजापति के साथ स्वयंभू का उल्लेख मिलता है। सबसे पहले अनादि निधन पुरुष ने महान् सलिल समुद्र के मध्य गर्भ धारण किया। वह ऋतु, अर्थात् कालजन्म गर्भ था। नियत समय पर उसी गर्भ से प्रजापति उत्पन्न हुआ –

"सुभूः स्वयंभूः प्रथमोऽन्तर्महत्यर्णवे।
दधे ह गर्भमृत्वियं यतो जातः प्रजापतिः"[3]**।**

उपर्युक्त मन्त्र में ब्रह्मा शब्द नहीं है किन्तु महीधर ने इस प्रजापति को ब्रह्मा का विशेषण बताया है।

यजुर्वेद में कहीं–कहीं प्रजापति को "परमेष्ठी" विशेषण से भी संयुक्त किया गया है। यथा –

"परमेष्ठ्यभिधीतः प्रजापतिः"[4]

"प्रजापतिः परमेष्ठ्यधिपतिरासीत्"[5]

International Journal of Education and Science Research Review
Volume-9, Issue-4 July-August-2022 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

प्रजापति को तप के द्वारा बढ़ने वाला कहा गया है – "प्रजापतेस्तपसा वावृयधानः"[6] शतपथ ब्राह्मण में भी उल्लेख मिलता है कि प्रजापति ने श्रम और तप द्वारा प्रजा की सृष्टि की अर्थात् वृद्धि को प्राप्त हुआ।

यजुर्वेद में प्रजापति का स्रष्टा रूप भी दृष्टिगत होता है। प्रजापति को "वृषा" कहा गया है क्योंकि वह सृष्टि में "रेतः" (बीज) का धारक है – "प्रजापतिवृषासि"[7]। अग्निचयन के प्रसंग में स्वयंमातृष्णा इष्टका को सम्बोधित करते हुए कहा गया है कि प्रजापति तुझे जलों के ऊपर स्थापित करे – "प्रजापतिः त्वा सादयत्वपां पृष्ठे समुद्रस्येमन्"।[8] वस्तुतः अग्निचयन में वेदी में इष्टकाओं का चयन सृष्टि–रचना का प्रतीक है और सृष्टि जलमय है। जल ही सृष्टि का आधार है। अतः यहाँ प्रजापति को सर्जनकर्ता का गौरव प्रदान किया गया है। त्रयोदश अध्याय के 24वें मन्त्र में भी ज्योतिष्मती नामक इष्टका के चयन में यही बात कही गयी है।

प्रजापति को "विश्वकर्मा" कहा गया है –

"तां विश्वैर्देवैः ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिः विश्वकर्मा विमुञ्चतुः"।[9]

इसमंत्रांश की व्याख्या में महीधर लिखते हैं कि "कीदृशः प्रजापतिः। विश्वैर्देवैः ऋतुभिश्च संविदानः संवित्त इति ऐकमत्यं गतः अहो महत्कर्मोखया कृतमिति संवादं कुर्वन्। विश्वकर्मा विश्वं सृष्टिरूपं कर्म यस्यासौ विश्वकर्मा"।

अष्टादश काण्ड में भी प्रजापति को विश्वकर्मा विशेषण प्रदान किया गया है –**"प्रजापतिर्विश्वकार्म मनो गन्धर्वस्तस्य ऋक्सामान्यपसरस न्यप्सरस एष्टयो नाम"।**[10]

यजुर्वेद में प्रजापति को "अधिपति" संज्ञा से भी विभूषित किया गया है –

"प्रजापतिरधिपतिरासीत्"।[11]

"प्रजापतिः परमेष्ठयधिपतिरासीत्"।[12]

"भुवनस्य पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा"।[13]

ऋग्वेद की भाँति यजुर्वेद में भी यत्र–तत्र प्रजापति देवता सविता देव से सम्बद्ध दिखाई देता है किन्तु ऋग्वेद में सविता के विशेषण के रूप में प्रयुक्त "प्रजापति" शब्द यजुर्वेद में एक स्वतन्त्र महत्वपूर्ण देवता का स्थान ले लेता है। अष्टम अध्याय में सविता के साथ प्रजापति का आह्वान पृथक रूप में हुआ है –

"धाता रातिः सवितेदं जुषन्तां प्रजापतिर्निधिपा देवो अग्निः"।[14]

यजुर्वेद में प्रजापति को सविता के अतिरिक्त अन्य अनेक देवताओं का सांनिध्य भी प्राप्त है। अष्टम अध्याय में धाता, अग्नि, त्वष्टा और विष्णु के साथ प्रजापति से हवि ग्रहण करने की स्तुति की गई है। 24वें काण्ड में वायु देव के साथ प्रजापति का आह्वान किया गया है –

"प्रजापतये च वायवे च गोमृगो"।[15]

32वें काण्ड में कहा गया है कि अग्नि, आदित्य, वायु, चन्द्रमा, आपः सब प्रजापति के ही रूप हैं –

"तदेवाग्निः तदादित्यः तद्वायुः तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तत् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः"।।[16]

शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद से सम्बद्ध है। शतपथ में पुनः–पुनः प्रजापति को छन्द रूप कहा गया है। वस्तुतः इस कथन का आधार यजुर्वेद ही है क्योंकि वेद–चतुष्टय में से केवल यजुर्वेद में ही "प्रजापतिश्छन्दः" उल्लेख अता है –

"मूर्धा वयः प्रजापतिश्छन्दः क्षत्रं वयो मयन्द छन्दः।"[17]

मयन्द छन्द अनिरूक्त होने के कारण प्रजापति रूप है। श्रुति में उल्लेख है कि सृष्टि सर्जन के पश्चात् शिथिल हुए प्रजापति के पास से पशु उसे छोड़कर चले गए। प्रजापति गायत्री रूप धारण कर उनके पास पहुँचे। चार मन्त्रों के द्वारा गायत्री रूप प्रजापति कल्पित किया जाता है। प्रजापति स्वयं ही छन्द है और क्षत्र उसकी आयु है। मयन्द छन्द प्रजापति रूप है। निघण्टु में "मय" सुख नामों में पठित है "मयं सुखं ददाति इति"। अतः मय का अर्थ है "सबको सुख देने वाला"। प्रजापति भी स्तोताओं की कामना को पूर्ण कर उन्हें सुख देता है। अतः वह मयन्द–छन्द रूप ही है।

प्रजापति को यजमान की प्रजा के साथ रमण करने वाला कहा गया है –

"प्रजापतिः प्रजया संरराणः त्रीणि ज्योतींषि सचते स षोडशी"।[18]

यहाँ षोडशी ग्रह के ग्रहण में षोडशी का परब्रह्म के रूप में स्तवन हुआ है। श्रुति कहती है "यः सर्वेषु भूतेषु तिष्ठति यश्च प्रजापतिर्भवति" अर्थात् जो सम्पूर्ण भूत–प्राणियों में सिित है वही प्रजापति कहलाता है। प्रजापति ने प्रजा के साथ रमण करते हुए तीनों ज्योतियों (अग्नि, वायु, सूर्य रूप) को प्राप्त किया।[19]

यजुर्वेद में "अजा" को प्रजापति का वर्ण कहा गया है – "प्रजापतेर्वर्णः"।[20] श्रुति भी कहती है कि "तपसो ह वा एषा प्रजापतेः संभूता यदजेति" चूँकि अजा भी एक वर्ष में तीन बार प्रजनन करती है। अतः प्रजापति के स्वरूप वाली है – "सा यत् त्रि संवत्सरस्य जायते तेन प्रजापतेर्वर्णः"। शतपथ में भी इसी प्रकार के उल्लेख मिलते हैं।

शतपथ ब्राह्मण के "अश्वमेघम्" नामक त्रयोदश काण्ड में अश्व को प्रजापति से सम्बद्ध किया गया है। सम्भवतः इसका स्रोत यजुर्वेद ही है। प्रजापति द्वारा रचित पञ्चपशुओं में अश्व भी परिगणित है। अतः प्रजापति और अश्व का परस्पर सम्बद्ध होना स्वाभाविक ही है इसीलिए यजुर्वेद के 22वें अध्याय में उद्धृत है –

"स्वगा त्वा देवेभ्यः प्रजापतये ब्रह्मन्नश्वं भन्तसयामि देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्यासम्। तं बधान देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्नुहि"।।[21]

यजुर्वेद में प्रजापति को सप्तदश[22], सोम का पान करने वाला[23] कहा गया है। मन्वन्तर की रचना करने वाले प्रजापति को स्वाहाकर द्वारा आहुति दी जाती है।[24] स्तोता कामना करते हैं कि हम प्रजापति की प्रजा होवें – "प्रजापतेः प्रजा अभूम"।[25]

ऋग्वेद के वरूण की भाँति यजुर्वेदिक प्रजापति नैतिक कर्मों से सम्बद्ध भी दृष्टिगत होता है। कहा गया है –

"प्रजापतौ त्वा देवतायामुपोदके लोके निदधाम्यसौ।
अप नः शोशुचदघम्"।।[26]

अर्थात् प्रजापति पापों का परिष्कार करने वाला है। अतः वह शुद्ध उदक रूप है इसीलिए यजमान को शुद्ध जलरूप प्रजापति में स्थापित करता है।

प्रजापति "ऋत्" से युक्त है। उसने सत्य और अनृत को विभक्त कर सत्य को श्रद्धा में तथा अनृत को अश्रद्धा में स्थापित किया। ऐसे ऋत्–स्वरूप प्रजापति से यजमान मेधा प्रदान करने की कामना करते हैं –

"मेधां मे वरूणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः"।[27]

प्रजापति को "भुवनपति"[28] भी कहा गया है। सम्पूर्ण विश्व प्रजापति का प्रतिरूप है। प्रजापति देवता के अतिरिक्त ऐसा कोई देवता नहीं है जिससे यह विश्व उत्पन्न हो सकता है –

"प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिता बभूव"।[29]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि शतपथ ब्राह्मण में पूर्णत्व को प्राप्त प्रजापति के स्वरूप की रूपरेखा यजुर्वेद में बन चुकी थी किन्तु वह धुँधली तथा अस्पष्ट थी। शतपथ ब्राह्मण में इस रूपरेखा में सुन्दर रंग भर दिया गया जिससे प्रजापति का एक शिष्टि, सुन्दर, सार्थक तथा महत्वपूर्ण रूप सामने आया।

सन्दर्भ –

1. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 19.75 (उवट भाष्य)
2. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 31.19
3. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 23.63
4. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 8.54
5. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 14.31

6. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 29.11
7. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 8.10
8. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 13.17
9. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 12.61
10. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 18.43
11. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 14.28
12. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 14.31
13. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 18.28
14. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 8.17
15. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 24.30
16. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 32.1
17. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 14.9
18. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 8.36
19. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 32.5
20. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 4.26
21. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 22.4
22. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 9.34
23. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 19.78, 79
24. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 11.66, 18.43, 22.20, 22.32 आदि।
25. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 18.29
26. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 35.6
27. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 32.15
28. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 18.44
29. शुक्ल–यजुर्वेद – संहिता (माध्यन्दिन) : 10.20